ए हिस्ट्री ऑफ़ फिलॉसफी
67 इंट्रोडक्शन टू एग्जिस्टेंशियलिज्म
बाय डॉ. आर्थर होम्स, व्हीटन कॉलेज

और फिर प्रैग्मैटिज़्म से जुड़ी कुछ मुश्किलों के बारे में। रिचर्ड बर्नस्टीन, जो हैवरफ़ोर्ड कॉलेज में हैं, पहले येल में पढ़ाते थे। रिचर्ड बर्नस्टीन ने प्रैग्मैटिज़्म पर काफ़ी कुछ लिखा है, और अपनी सोच में प्रैग्मैटिस्ट बातों को अपनाने की कोशिश की है, और ऐसा करते हुए उन्होंने प्रैग्मैटिज़्म के पाँच योगदान बताए हैं।

अब, मैं मानता हूँ कि ये उनकी अपनी सोच में योगदान हैं। आप शायद इन्हें योगदान न मानें, सभी का, लेकिन कम से कम कुछ का तो ज़रूर। पहला है फाउंडेशनलिज़्म को नकारना, और आप देख रहे हैं कि यह थीम कैसे बार-बार आती रहती है।

एग्ज़िस्टेंशियल ट्रेडिशन में भी होगा । फ़ाउंडेशनलिज़्म को नकारना, वह ट्रेडिशन जो हमें डेसकार्टेस से मिली है, जिसमें कुछ ऐसे फ़ाउंडेशन से बाकी सब कुछ लॉजिकली निकालने की कोशिश की जाती है जिन पर कोई शक न हो। दूसरा योगदान है फ़ैलिबिलिज़्म।

फ़ैलिबिलिज़्म यह सोच है कि इंसान के सभी फ़ैसले ग़लत हो सकते हैं, इसलिए कोई लॉजिकली पक्की बात नहीं है। और, ज़ाहिर है, यह फ़ाउंडेशनलिज़्म को नकारने का हिस्सा है। लेकिन, ज़ाहिर है, प्रैग्मैटिस्ट, फ़ैलिबिलिज़्म को मानते हुए, सोचता है कि प्रैग्मेटिक तरीका खुद को ठीक करने का प्रोसेस है, क्योंकि किसी आइडिया, जैसे हाइपोथीसिस, के साथ एक्टिव इम्प्लीमेंटेशन और एक्सपेरिमेंट, ज़ाहिर है कि समय से पहले ओवर एश्योरेंस, कट्टरता, वगैरह पर एक सुधार होगा।

तीसरा योगदान जो उन्होंने बताया है, वह है खुद का सोशल कैरेक्टर। यानी, किसी व्यक्ति के अलग-थलग एटमिस्टिक नज़रिए से अलग होना। रॉबिन्सन क्रूसो थ्योरी।

और खुद को सोशल रिश्तों के पूरे कॉम्प्लेक्स के अंदर एक जगह के तौर पर देखना। यह खास तौर पर ड्यूई में साफ़ दिखता है। और मुझे लगता है कि यह समझा जा सकता है कि किसी भी हेगेलियन-इंफ्लुएंस्ड मूवमेंट में, आपको इस तरह की नई कोशिश मिलेगी कि हम अलग-थलग इंसान नहीं बल्कि सोशल बीइंग हैं।

18वीं सदी के एटमिज़्म को इतिहास के दौरान एक व्यक्ति के हेगेलियन तरह के उभरने की वजह से खारिज कर दिया गया है। अगर आप चाहें, तो हेगेल के कंक्रीट यूनिवर्सल के कॉन्सेप्ट पर वापस जाएं, तो व्यक्ति अतीत की यूनिवर्सल संभावनाओं का ऐतिहासिक एहसास है। ताकि व्यक्ति में यूनिवर्सलिटी और खासियत मिल जाए।

हेगेल की थीसिस, एंटीथीसिस, यूनिवर्सल , खास, इंडिविजुअल का सिंथेसिस याद रखें । और जब तक ये यूनिवर्सल पॉसिबिलिटीज़ समाज के दूसरे इंसानों के साथ रिश्ते हैं, तो इंडिविजुअल वैसा

ही है। जैसे कोई प्रॉब्लम सिचुएशन कोई अलग चीज़ नहीं होती, बल्कि रिश्तों के पूरे नेटवर्क से पैदा होती है जिसके अंदर हम रहते हैं।

बायोलॉजिकल रिश्ते, साइकोलॉजिकल, सोशियोलॉजिकल, एनवायर्नमेंटल, वगैरह-वगैरह। तो यह सोच ज़रूरी है। और उससे जुड़ी, चौथी बात, इंसानी ज़िंदगी और इंसानी नेचर में कंटिंजेंसी है।

ज़िंदगी न सिर्फ़ हर तरह की चीज़ों पर निर्भर करती है, बल्कि एक इंसान के तौर पर मैं जो हूँ, वह भी हर तरह की चीज़ों पर निर्भर करता है, जेनेटिक और एनवायरनमेंटल। और यही बात इंसानी नेचर के बारे में भी सच है, खासकर ड्यूई के इवोल्यूशनरी नेचुरलिज़्म के कारण, जो उस इवोल्यूशनरी पास्ट पर निर्भर करता है। और फिर बर्नस्टीन का प्रैग्मैटिज़्म का पाँचवाँ योगदान है प्लूरलिज़्म को मानना।

फिलॉसॉफिकल प्लूरलिज़्म, एथिकल प्लूरलिज़्म, और रिलीजियस प्लूरलिज़्म, यह एक ऐसा शब्द है जिससे आप में से बहुत से लोग पिछले हफ़्ते की कॉन्फ्रेंस के बाद अच्छी तरह वाकिफ होंगे। कहने का मतलब है, यह मानना कि कई अलग-अलग नज़रिए एक साथ मौजूद हैं, जिनमें से किसी भी तरह की लॉजिकल निश्चितता के साथ चुनना नामुमकिन है। और इसलिए दूसरी बातों के बारे में एक रिलेटिविज़्म है।

सिवाय तब तक जब तक कोई विश्वास अनुभव से वेरिफ़ाई न हो। लेकिन हाँ, ध्यान रखें कि एक्सपेरिमेंटल वेरिफ़िकेशन भी किसी बात को पूरी तरह से वैलिडेट नहीं करता। सिर्फ़ इसलिए क्योंकि एक प्रैक्टिकल टेस्ट नतीजे की पुष्टि करने की गलती करता है ।

आप जानते हैं कि अगर एक काल्पनिक सिलोगिज़्म में आप कह रहे हैं कि अगर A तो B. और आप कहते हैं हाँ, B सही है, इसलिए A. आप परिणामी को कन्फर्म कर रहे हैं , जो लॉजिकली गलत है। अगर बारिश होगी, तो मैं भीग जाऊंगा। मैं भीग रहा हूँ, इसलिए बारिश हो रही है।

बिल्कुल नहीं। किसी ने मुझ पर नली घुमा दी होगी। भीगने के और भी कई तरीके हैं।

तो इस तरह से काम करने वाला प्रैक्टिकल टेस्ट, अगर आप चाहें तो, कुछ संभावना तय कर सकता है कि A, सच के पारंपरिक मतलब में सच है। लेकिन निश्चित रूप से कोई निश्चितता नहीं है। लेकिन तब प्रैक्टिकल व्यक्ति निश्चितता में दिलचस्पी नहीं रखता है, और उसे सच के पारंपरिक मतलब में भी दिलचस्पी नहीं है ।

तो वह कंटिंजेंसी तो बनी ही रहती है, और प्लूरलिज़्म बना रहता है। खैर, इसका मतलब यह है कि प्रैग्मैटिज़्म एक तरह का पोस्टमॉडर्निज़्म है। यह एक तरह का एंटी-रियलिज़्म है।

और निश्चित रूप से बाद में इसे इसी दिशा में ले जाया गया है। उदाहरण के लिए, मैंने पिछली बार रिचर्ड रॉर्टी का ज़िक्र किया था। और मुझे लगता है कि वे आज की सोच में सबसे बेहतरीन एंटी-रियलिस्ट हैं।

तो ये चीज़ें। बर्नस्टीन इन सबको लेने के लिए तैयार है। मुझे लगता है कि मैं पहले साढ़े तीन, चार खरीदने के लिए तैयार हूँ।

फाउंडेशनलिज़्म, फॉलिबलिज़्म, खुद का सामाजिक चरित्र, इंसानी ज़िंदगी की कंटिंजेंसी, वगैरह को नकारना। प्रैग्मैटिज़्म के साथ मेरी मुश्किलें, बेशक, इसके फिलोसोफिकल नेचुरलिज़्म से पैदा होती हैं। अंदर के नेचुरलिज़्म से।

इस वजह से, मौजूद किसी भी चीज़ की कोई अंदरूनी कीमत नहीं होती। यह, ज़ाहिर है, फिलॉसॉफिकल नेचुरलिज़्म के साथ-साथ होने वाली बातों में से एक है, और यह ज़रूरी भी है। कीमत का ठिकाना, ज़ाहिर है, वही होगा जिसे कोई इंसान महत्व देता है।

और ड्यूई इस बारे में साफ़-साफ़ कहते हैं। वह इस बारे में बात करने से मना कर देते हैं कि क्या कीमती है। इसका मतलब है अंदरूनी कीमत।

और सिर्फ़ उसी चीज़ की बात करते हैं जिसकी वैल्यू है। इसलिए इंट्रिंसिक वैल्यू का नुकसान चिंता की बात है। अगर कोई इंट्रिंसिक वैल्यू नहीं है।

नहीं, इसे वापस ले लो। अगर अंदरूनी वैल्यू हैं, तो ज़ाहिर है प्रैग्मैटिज़्म, जो सिर्फ़ रिलेटिव वैल्यू से जुड़ा है, काफ़ी नहीं है। और थ्योरी और प्रैक्टिस के बीच का रिश्ता प्रैग्मेटिक से कहीं ज़्यादा होने वाला है।

इंट्रिंसिक वैल्यू की वजह से। लेकिन इससे दूसरी मुश्किल खड़ी होती है, कि प्रैग्मैटिज़्म सिर्फ़ इंट्रिंसिक वैल्यू को मना नहीं करता, बल्कि किसी विश्वास या विचार की सिर्फ़ सिचुएशनल वैल्यू को मानता है। ताकि हर सिचुएशन अलग हो सके।

जैसे कि ज़िंदगी बहुत सारे अलग-अलग हालात से बनी है। हर एक दूसरे से अलग है। यह अपने आप में एक तरह का एटमिज़्म है।

और इसलिए, मुझे लगता है, यह इंसानी ज़िंदगी में मौजूद व्यवस्था को देखने में नाकाम रहता है। कहने का मतलब है, यूनिवर्सल तरह के हालात होते हैं। यूनिवर्सल तरह की इच्छाएँ होती हैं।

इसलिए, यूनिवर्सल तरह के मूल्य। पूरी एकता के अंदर आपस में जुड़े हुए। मेरी शिकायत यह है कि ड्यूई में आपस में काफी जुड़ाव नहीं है।

यह नेचुरलिज़्म के नतीजों में से एक है। लेकिन अगर यूनिवर्सल तरह की प्रॉब्लम सिचुएशन, यूनिवर्सल इंसानी ज़रूरतें, वैल्यूज़ हैं, तो यह एक तरह की टेलियोलॉजी की ओर इशारा करता है जो इंसानी वजूद और नेचर में चलती है। इसका मतलब होगा कि हमारे पास सिर्फ़ अलग-अलग प्रॉब्लम सिचुएशन नहीं हैं, बल्कि एक पूरी सिचुएशन है।

ज़िंदगी के पूरे प्रोजेक्ट पर ध्यान देना होगा । ज़िंदगी का पूरा मतलब, उसका मकसद। सिर्फ़ यह नहीं कि खास हालात में क्या चाहिए ।

तो मुझे लगता है कि बात का निचोड़ यह है कि नेचुरलिज़्म अंदरूनी वैल्यूज़ को नकारता है। लेकिन एक बार जब आप एक आपस में जुड़ी हुई चीज़ में अंदरूनी वैल्यूज़ पा लेते हैं, तो आपके पास एक लोगो स्ट्रक्चर और एक टेलियोलॉजी होती है। जो आपको एक प्रैक्टिकल तरीके से जो हासिल हो सकता है, उससे कहीं ज़्यादा आगे ले जाएगा।

तारीफ़ों के संदर्भ में कही जा सकती है । प्रैग्मैटिज़्म के बारे में एक और बात जो मैंने लंबे समय से पसंद की है, वह है थ्योरी और प्रैक्टिस के बीच अंदरूनी कनेक्शन की पहचान। एनलाइटनमेंट सोच में यह झुकाव होता है कि थ्योरी को सिर्फ़ समझने के लिए सोचा जाए।

और अगर इसका कोई इस्तेमाल होता है, तो बहुत अच्छा है। जबकि मुझे लगता है कि ड्यूई से मैंने जो बातें सीखी हैं, उनमें से एक यह है कि थ्योरेटिकल खोज का अपना नैचुरल स्टिमुलस, अपना नैचुरल हैबिटैट, अगर आप चाहें तो, ज़िंदगी ही है। इसलिए सोच का थ्योरेटिकल मूवमेंट ज़िंदगी के दौरान होने वाली चीज़ों से शुरू होता है।

और इस वजह से, हम खुद को पीछे हटकर यह समझने की कोशिश करते हुए पाते हैं कि क्या हो रहा है। और दिमागी जिज्ञासा ज़्यादातर थ्योरेटिकल कारणों के साथ-साथ प्रैक्टिकल कारणों से भी बनी रहती है। लेकिन प्रैक्टिस से थ्योरी और थ्योरी से प्रैक्टिस का फीडबैक लूप हमेशा बना रहता है।

और मुझे लगता है कि यह फिलॉसफी के इतिहास से अच्छी तरह पता चलता है। जहाँ आप उस समय के ज़रूरी मुद्दों और थ्योरेटिकल डेवलपमेंट के बीच का रिश्ता देख सकते हैं। साथ ही थ्योरेटिकल दिशा के स्टिमुलस में और थ्योरी को प्रैक्टिस में वापस लाने में भी।

तो मुझे इस मामले में ड्यूई मददगार लगते हैं। ज़िंदगी के कॉन्टेक्स्ट में फ़िलॉसफ़ी को रखना। जब मैं यह कहता हूँ तो मैं देखता हूँ कि लोग सिर हिला रहे हैं।

मुझे कुछ लोगों की आँखें चमकती हुई दिख रही हैं। मुझे ब्रायन के चेहरे पर कुछ मुस्कान दिख रही है वगैरह। क्या कोई कुछ कहना चाहता है? नहीं? क्या आप दूसरे टॉपिक में बहुत ज़्यादा उलझे हुए हैं? ठीक है, चलिए उस पर चलते हैं।

तो, अगले दो हफ़्तों में, हम एग्ज़िस्टेंशियलिज़्म और फेनोमेनोलॉजी पर बात करेंगे। अब, दोनों को कन्फ्यूज़ न करें। हमने हेगेल के रेफरेंस में फेनोमेनोलॉजी शब्द सुना था।

और इसलिए हमें याद रखना चाहिए कि फेनोमेनोलॉजी एक तरीका है, कोई पोजीशन नहीं। यह एक फिलॉसॉफिकल थ्योरी के बजाय एक डिस्क्रिप्टिव तरीका है। हालांकि, यह एक डिस्क्रिप्टिव तरीका है जिसे 20वीं सदी के कुछ एग्जिस्टेंशियलिस्ट ने अपनाया और इस्तेमाल किया।

तो एग्जिस्टेंशियलिज़्म से हमारा इंट्रोडक्शन 19वीं सदी की जड़ों के हिसाब से होगा, जिसमें कीर्केगार्ड और नीत्शे शामिल हैं। दोनों ही गार्डनर एंथोलॉजी में शामिल हैं। और दोनों को ही आप

इस हफ़्ते पढ़ने वाले हैं, है ना? मैं सोच रहा था कि क्या मैंने आपसे थीसिस स्टेटमेंट लिखने के लिए कहा था।

और मुझे जो भी पढ़ना है, उसे देखते हुए, मैंने अभी-अभी अपने दूसरे कोर्स के एग्जाम की तैयारी में आठ घंटे बिताए हैं। और अब मुझे इस हफ़्ते आपके ये बुक रिव्यू पढ़ने हैं। मैंने तय किया है कि खुद के प्रति दया की क्वालिटी में कोई कमी नहीं आई है।

हालांकि मैं चाहता हूं कि आप वो थीसिस स्टेटमेंट्स करें। लेकिन मैं इस समय खुद पर वो थोपना नहीं चाहता। इसलिए मैं ऐसा नहीं करूंगा।

लेकिन ज़रूर पढ़ें। आपको वे दिलचस्प और मददगार लगेंगे। जैसे-जैसे हम आगे बढ़ेंगे, मैं उनका ज़िक्र करता रहूँगा।

एग्ज़िस्टेंशियलिज़्म ज़्यादातर यूरोपियन फ़िलॉसफ़ी थी। और मैं कहता हूँ कि थी। क्योंकि यह असल में एक फ़िलॉसफ़िकल मूवमेंट था जो 20वीं सदी के पहले हिस्से में फला-फूला।

और कई मायनों में अब यह पुराना हो चुका है। मैं एक्टिविस्ट साठ के दशक को एग्ज़िस्टेंशियलिज़्म के अंत के तौर पर देखता हूँ। आप देखिए, अगर निराशावादी एग्ज़िस्टेंशियलिस्ट कह रहे थे कि ज़िंदगी बेकार है, इसका कोई मकसद नहीं है, तो साठ के दशक के बहुत सारे मतलब और मकसद थे।

और इसलिए मुझे ऐसा लगता है कि उस संदर्भ में एक फ़ेज़-आउट हुआ था। इसे रिकवर नहीं किया गया है । एग्ज़िस्टेंशियलिज़्म मुख्य रूप से, हालांकि, एक थ्योरेटिकल पोज़िशन, एक थ्योरी, डॉक्ट्रिन का एक सेट नहीं है।

यह मुख्य रूप से कोई सोच नहीं है। यह ज़्यादा ध्यान, चिंता का केंद्र है। यानी, इंसानी अस्तित्व पर ध्यान।

इंसानी स्वभाव के सार पर नहीं। अब, वह एसेंशियलिज़्म होगा, एग्ज़िस्टेंशियलिज़्म नहीं। यह एसेंस पर फ़ोकस नहीं है।

लेकिन अस्तित्व पर। इंसानी अस्तित्व की समस्या पर जैसा हम अनुभव करते हैं। और इसलिए व्हाइटहेड और ड्यूई में हमें जो कुछ बातें सुनने को मिली हैं, वे बहुत सही हैं।

ठोस अनुभव। जॉन लॉक के बताए गए उस तरह के अमूर्त अनुभव नहीं, बल्कि एक ठोस अनुभव। और यह विचार कि सेल्फ -कॉन्शसनेस वह लेंस है जिससे बाकी सब कुछ देखा जाता है।

बहुत सही है। क्योंकि यह एक सेल्फ-कॉन्शस अस्तित्व है। इस तरह की दुनिया में होने की चेतना।

एग्ज़िस्टेंशियलिस्ट इसी बात को लेकर परेशान है। ऐसा अस्तित्व जो बिना मतलब का या असली न हो। और सवाल यह है कि यह असली कैसे हो सकता है? यह कैसे मतलब दे सकता है? या हम इसे कैसे मतलब दे सकते हैं? तो, मुझे लगता है कि आप इस एग्ज़िस्टेंशियल फ़ोकस को इंसानी अस्तित्व की एक फ़िलॉसफ़ी के तौर पर सोच सकते हैं।

इंसानी वजूद के बारे में सोच-विचार। टूटी-फूटी दुनिया में इंसानी वजूद। कैसा लगता है? इस तरह की दुनिया में, बिना सोचे-समझे, अंदर से जीना।

बेकार जगहें। टीएस इलियट। और ऐसी दुनिया में रहने का सेल्फ-कॉन्शसनेस ही असली चीज़ है।

शायद आजकल यह अनुभव इतना आम हो गया है कि अजीब नहीं लगता। लेकिन क्या आपको कभी कैमरे के सामने सेल्फ-कॉन्शस महसूस होता है? मैं अब उस चीज़ के सामने सेल्फ-कॉन्शस होने से उबर चुका हूँ। मैं बस इसे इग्नोर कर देता हूँ।

सिवाय अब जब मैं इससे बात कर रहा हूँ। लेकिन अपनी मौत के सामने खुद को लेकर सेल्फ-कॉन्शसनेस। हाँ।

हाँ। मुझे याद है जब हमने मेरे ससुर को दफ़नाया था। ताबूत नीचे रखे जाने के बाद मैंने अंधेरे गड्ढे में देखा और खुद से कहा, अच्छा, अब अगला नंबर मेरा है।

मेरी पीढ़ी। आप देखिए। अब, यह उस तरह की सेल्फ-कॉन्शसनेस है जो सिर्फ़ एक अवेयरनेस नहीं है।

फीलिंग या एंग्जायटी से भरा न हो ।

या उस तरह की कोई और क्वालिटी। जिसे हम आजकल इंसानी अस्तित्व की एग्ज़िस्टेंशियल क्वालिटी कहते हैं। और इसलिए आपको कीर्केगार्ड सिलेक्शन की हेडिंग्स में डर, एंग्ज़ायटी और उदासी जैसे शब्द मिलते हैं।

आप देखिए। क्योंकि ये हमारे सेल्फ-कॉन्शियस होने के गुण हैं। अब, इसका मतलब यह है कि इंसान मुख्य रूप से समझदार जानवर नहीं हैं जो तर्क से चलते हैं।

वह ज्ञान का दर्शन ही भगवान है। हम रोमांटिक जीव नहीं हैं जो किसी रोमांटिक दुनिया में रहते हैं। बगीचे में सब कुछ गुलाबी है ।

नहीं, रोमांटिकता खत्म हो गई है। अगर आप चाहें तो एग्जिस्टेंशियलिज़्म का मतलब है रोमांटिकता का खट्टा होना। कद्दू सड़ गया।

आप देखिए। अब, सिंड्रेला क्या करने वाली है? और यह भावना टेक्नोलॉजिकल समाज में और बढ़ जाती है। मुझे यकीन नहीं है कि इंडस्ट्रियल रेवोल्यूशन से पहले एग्ज़िस्टेंशियलिज़्म कभी पैदा हुआ होगा।

लेकिन एक इंडस्ट्रियलाइज़्ड टेक्नोलॉजिकल समाज में, डिह्यूमनाइज़ेशन, एलियनेशन जैसी थीम होती हैं। हाँ, यह मार्क्स की थीम थी।

खैर, वह और कीर्केगार्ड एक ही समय के थे। अलग-अलग पहलू और एक जैसी समस्याएं देखते थे। अकेलापन।

दबाव डाल रही हो, एक जागरूक ज़िंदगी एक ऐसी दुनिया है जिसमें कोई वैल्यू नहीं है, एक ऐसा अस्तित्व है जिसका कोई मतलब नहीं है, एक ऐसा अस्तित्व है जिसका कोई सार नहीं है।

जैसा कि सार्त्र कहते हैं। और इस समय के एक जर्मन लेखक, मैक्स शेलर, जो एग्ज़िस्टेंशियलिस्ट से ज़्यादा फेनोमेनोलॉजिस्ट हैं, इसे इस तरह कहते हैं। हम पहली पीढ़ी हैं जिसमें इंसान खुद के लिए पूरी तरह से प्रॉब्लम बन गया है।

जिसमें उसे अब यह नहीं पता कि वह असल में क्या है। लेकिन साथ ही यह भी पता है कि वह नहीं जानता। फिर भी वह बहुत चाहता है कि उसे पता हो।

समझे ? अब, यह उस तरह की सिचुएशन में है। एक टूटी हुई दुनिया में जीने की तकलीफ़ भरी सेल्फ-कॉन्शसनेस। यह उस तरह की सिचुएशन में है।

एग्ज़िस्टेंशियलिस्ट का नज़रिया कोई थ्योरी नहीं देगा। आप एग्ज़िस्टेंशियल एंग्ज़ायटी को हल करने के लिए कोई थ्योरी नहीं देते। ठीक वैसे ही जैसे आप अपना चेहरा धोने के लिए हथौड़े का इस्तेमाल नहीं करते।

यह गलत टूल है। एग्ज़िस्टेंशियलिस्ट किसी यूनिवर्सल तर्क के नियमों का हवाला देकर किसी विरोधी को गलत साबित करने की कोशिश नहीं कर रहा है। नहीं।

वह इंसानी स्वभाव के यूनिवर्सल सार को बताने की कोशिश नहीं कर रहे हैं। जैसा कि अरिस्टोटेलियन या थॉमिस्ट परंपरा में होता है। और निश्चित रूप से पूरे मामले से कोई ऑब्जेक्टिव डिटैचमेंट पाने की कोशिश नहीं कर रहे हैं।

आप देखिए। नहीं, बल्कि, वह मुश्किल को रोशनी देने वाले तरीके से बताने की कोशिश कर रहा है। स्थिति को बताने और उसे समझाने की।

हम जिस उलझन में हैं। अगर आप चाहें तो यह जानने की कोशिश कर रहे हैं कि हम किस चीज़ से डरते हैं। तो, किसी इंसान के होने की इन खासियतों को बताने की कोशिश कर रहे हैं ।

चिंता। ज़ोर एक ऐसे व्यक्ति पर है जो होश में अपने होने को महसूस करता है। आप देखिए।

एक ऐसा विषय जिसमें वो सारी अंदरूनी बातें हैं जो मैं, यानी विषय के साथ हैं। आप देखिए। जेरी ब्राउन की 'वी द पीपल' भी बहुत ज़्यादा ऑब्जेक्टिव और इंपर्सनल है।

क्योंकि हमारे अंदर कोई अंदरूनीपन, इस तरह की कोई भावना नहीं होती। यह एक अलग 'मैं' है। तो यह एक बताने वाला काम है। और इसमें, मुझे लगता है कि यह कहना सही होगा कि एग्ज़िस्टेंशियलिज़्म अपनी शुरुआत में 19वीं सदी से प्रभावित है।

है । दोनों में से कोई भी एग्ज़िस्टेंशियलिस्ट नहीं था। लेकिन मुझे लगता है कि उनके बिना, यह कहना सही होगा कि एग्ज़िस्टेंशियलिज़्म कभी नहीं होता, कम से कम किसी भी रूप में जिसे हम जानते हैं।

पहले के विचारकों में पहले से अस्तित्ववादी भावनाएँ रही होंगी। ऑगस्टीन, पास्कल।

लेकिन उस एग्ज़िस्टेंशियलिज़्म का नहीं जिसे हम जानते हैं। कांट का असर? हाँ, कांट की कोपरनिकन क्रांति का। जो, जैसा आपको याद होगा, इस सोच से आगे बढ़ी थी कि हम दुनिया के ऑब्जेक्टिव, अलग देखने वाले हैं और दुनिया जैसी है, उसके हिसाब से खुद को, अपनी सोच को ढाल लेते हैं।

उससे आगे बढ़ते हुए, क्रांति, उससे आगे बढ़ते हुए इस नज़रिए की ओर कि दुनिया हमारे हिसाब से, हम जैसे हैं, वैसी ही होगी, अंदर से सामने आएगी। और इसलिए यह कांटियन ज़ोर है जो ट्रांसेंडेंटल सेल्फ, ट्रांसेंडेंटल ईगो पर है जो सामने आता है। यह इंट्यूशन के रूपों और समझ की कैटेगरी में पहले से ही तय है।

आप देखिए। यह 'मैं' दुनिया में अपने स्ट्रक्चर और मतलब लाता है। अब इस तरह की थीम पूरे एग्ज़िस्टेंशियलिस्ट में चल रही है।

तो, वहाँ कांट का असर है। हेगेल का असर है। हाँ, डायलेक्टिक का।

खुलती हुई सेल्फ-कॉन्शसनेस का डायलेक्टिक। थीसिस, एंटीथीसिस, सिंथेसिस। सिंथेसिस एक नए एंटीथीसिस के लिए थीसिस बन जाता है।

आप देखिए, सेल्फ -कॉन्शसनेस का यह खुलना। अब, यह सच है कि हेगेल ने इस डायलेक्टिक का इस्तेमाल एक सार से दूसरे सार तक जाने वगैरह में किया था । यह एक थ्योरेटिकल डायलेक्टिक है।

कीर्केगार्ड के लिए, यह एक एग्ज़िस्टेंशियल डायलेक्टिक है। आप देखिए, हमारी भावनाओं की ठोसता में, हम थीसिस से एंटीथीसिस और सिंथेसिस की ओर बढ़ते हैं। जब तक कि, फ़ाइनल एनालिसिस में, जैसा कि सार्त्र के साथ हुआ, कोई फ़ाइनल सिंथेसिस न हो।

इसीलिए सार्त्र इतने निराशावादी हैं। इसलिए जब आप अगले हफ़्ते सार्त्र की किताब 'ट्रांसेंडेंस ऑफ़ द ईगो' पढ़ेंगे, तो आपको किसी भी तरह की दुनिया में खुद के बारे में जागरूक होने का काम मिलेगा। सिर्फ़ मतलब बनाना नहीं, बल्कि खुद को बनाना।

तो आप और मैं कुछ भी नहीं हैं। और हम हर सोचने, देखने, हिस्सा लेने, वगैरह के काम में खुद को, मानो, नए सिरे से बनाते हैं। खैर, और यह एक डायलेक्टिकल प्रोसेस है।

खैर, आप पाएंगे कि कांट ने थीसिस-एंटीथीसिस-सिंथेसिस का जो ब्यौरा दिया है, वह है तुरंत होना, मीडिएशन, तुरंत होना, मीडिएशन, और फिर अगला कदम, सिंथेसिस, जो भी हो। वह तुरंत होना, मीडिएशन, ये शब्द एग्ज़िस्टेंशियल लेखकों की खासियत हैं। इसके अलावा, हेगेल से, फेनोमेनोलॉजिकल ब्यौरा।

आप देखिए, फेनोमेनोलॉजिकल तरीका। वह हेगेल का है। तो नौकर-मालिक वाली बात को ध्यान में रखें।

सेल्फ -कॉन्शसनेस का ऐसा डायलेक्टिक आम होने वाला है। हेगेल से शायद एक और थीम, आज़ादी की बात है । याद रखें, हेगेल ने कहा था कि इतिहास का पूरा प्रोसेस आज़ादी का एब्सोल्यूटाइज़ेशन है।

पूरी तरह से सेल्फ-कॉन्शसनेस का विकास उसकी आज़ादी का एब्सोल्यूटाइज़ेशन है। खैर, एग्ज़िस्टेंशियलिस्ट इतिहास में किसी भी टेलियोलॉजी को भूल जाता है , लेकिन आज़ादी का एब्सोल्यूटाइज़ेशन ढूंढ लेता है। आप देखिए, व्यक्ति की आज़ादी।

किसी हेगेलियन तरह के एब्सोल्यूट का हिस्सा नहीं, बल्कि एक व्यक्ति के तौर पर। और नतीजतन, एग्ज़िस्टेंशियलिस्ट के लिए, मूवमेंट एग्ज़िस्टेंस से एसेंस की ओर है। आप समझे? होने से, नहीं, खैर, होने से, अगर एग्ज़िस्टेंस से आपका यही मतलब है, तो बनने के ज़रिए।

देखा ? एक और तरह के होने के लिए, कैपिटल B. अस्तित्व के बजाय एसेंस। आप पाएंगे कि हाइडेगर में, उदाहरण के लिए, इस सिर्फ़ अस्तित्व को वेरहैंडेंसिन कहा गया है । किसी भी दूसरी चीज़ की तरह बस हाथ में होना।

आप देखिए, पहचान की कोई अंदरूनी भावना बिल्कुल नहीं है। वेरहांडेसेन । या, अगर आप चाहें, तो डेसीन।

डेसीन. वो है. वो है.

सिर्फ़ ऑब्जेक्ट। अस्तित्व से अलग। हाँ, यही मतलब वाली बात है।

टर्मिनोलॉजी एक-दूसरे से अलग होती है। लेकिन ज़ोर खुद के लिए असली अस्तित्व को खोजने और बनाने में अस्तित्व की आत्म-चेतना को सामने लाने की प्रक्रिया पर है। ठीक है, ये आम बातें हैं।

मैं यह भी कहना चाहता हूँ कि एग्जिस्टेंशियलिज़्म की अलग-अलग किस्में हैं। जिनमें से कुछ खासियतें दूसरों की तुलना में ज़्यादा खास होती हैं। उदाहरण के लिए, कुछ लोग ऐसे भी हैं जो पूरी तरह से अधार्मिक हैं।

और दूसरे एग्ज़िस्टेंशियल विचारक भी हैं जो धार्मिक हैं। अब, ज़ाहिर है, कीर्केगार्ड धार्मिक लोगों में से एक हैं और नीत्शे अधार्मिक लोगों में से एक हैं। तो हमें अपना सैंपल वहीं मिलता है।

लेकिन दूसरे धार्मिक लोगों के नाम, जैसे गैब्रियल मार्सेल, एक फ्रेंच कैथोलिक लेखक। जो एक और अधार्मिक व्यक्ति, यानी सार्त्र से इतने नफ़रत करते थे कि उन्होंने खुद को एग्ज़िस्टेंशियलिस्ट कहने से मना कर दिया और इसके बजाय 'फ़िलॉसफ़ी ऑफ़ एग्ज़िस्टेंस' शब्द गढ़ा। मार्सेल।

या पॉल टिलिच, प्रोटेस्टेंट धर्मशास्त्री। या मार्टिन बुबेर, यहूदी दार्शनिक। जबकि यहाँ जो लोग अधार्मिक हैं, उनके पास सार्त्र हैं, आपके पास हाइडेगर हैं।

वगैरह-वगैरह। अब, बस यही फ़र्क एक और फ़र्क पैदा करता है। क्योंकि मार्सेल और बूबर जैसे लोगों में, खासकर, आपको यह एहसास होता है कि मतलब, होने का मतलब, रिश्ते में पाया जाता है।

यह बुबर ही हैं जिन्होंने 'मैं-तुम' शब्द बनाया, बनाया नहीं बल्कि इसे पॉपुलर बनाया। वे कहते हैं कि बेसिक शब्द 'मैं' नहीं, 'तुम' नहीं, बल्कि 'मैं-तुम' है। और 'मैं' का मतलब सिर्फ़ रिश्ते से अलग होता है ।

लेकिन हम होने का अनुभव, अकेले 'मैं' के अनुभव से पहले होता है। और मुझे लगता है कि छोटे बच्चों में यह साफ़ तौर पर होता है। और मार्सेल के साथ भी ऐसा ही है। और बेशक, कीर्केगार्ड में, असली अस्तित्व भगवान के साथ रिश्ते में मिलता है।

तो सिर्फ़ असली बात नहीं है। और इसमें कोई हैरानी की बात नहीं है कि सार्त्र जैसा कोई, जो रिश्तों को मैसोकिस्टिक या सैडिस्टिक और अधार्मिक मानता है, आखिर में कहता है कि इन सबका कोई मतलब नहीं है। हाँ, अपनी बड़ी किताब, बीइंग एंड नथिंगनेस में।

उन्होंने प्यार पर कोई चर्चा नहीं की। नहीं, उन्होंने सेक्सुअलिटी पर चर्चा की, लेकिन यह सब मैसोकिज़्म और सैडिज़्म के बारे में था। इसमें कोई पॉज़िटिव, नर्चरिंग वाला रिश्ता शामिल नहीं था।

और इसका कारण? खैर, उनकी फेनोमेनोलॉजी इसे समझाना, बताना शुरू करती है। मुझे लगता है, आखिर में इसका कारण दो तरह का है। एक, बायोग्राफिकल।

उनकी ऑटोबायोग्राफी, जिसे वर्ड्स कहते हैं, काफी कुछ बताती है। लेकिन इसके अलावा एक बात यह भी है कि सार्त्र में, जिसे वे ल'एनसोइर और ले पोरसोइर कहते हैं , उसके बीच एक द्वंद्व चलता रहता है। ल'एनसोइर बस वही है जो अपने आप में है ।

ले पोरसोइर वही है जो वह अपने लिए है। अब, क्या यह कांट की तरह है? वह चीज़ अपने आप में, वह चीज़ मेरे लिए? यह कांटियन भाषा है। बात यह है कि सेल्फ-कॉन्शियस व्यक्ति इस बात से चिंतित है, हाँ, दुनिया मेरे लिए जैसी है।

हाँ। और दुनिया की ज़िद की वजह से हर समय रुकावट बनी रहती है । आप में से कितने लोगों ने सार्त्र का नाटक नो एग्जिट पढ़ा है? ठीक है, शायद आप में से छह लोगों ने पढ़ा होगा।

बाकी सब लोग कर लो। मैं तो कहने ही वाला था कि बेवकूफ़। कर लो! हे भगवान, तुम अपनी पूरी ज़िंदगी अपने साथ क्या करते रहे हो? अगर तुम पढ़ सको तो एक घंटे में इसे पढ़ लोगे।

लेकिन देखिए, यह तीन लोगों की तस्वीर है, दो औरतें और एक आदमी, एक कमरे में हैं जहाँ से बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं है। ओह, पता चला कि वहाँ एक दरवाज़ा खुला है। वे बस बाहर निकलने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहे हैं।

यह नरक की एक ड्रामाटिक सेटिंग है। यह मौत के बाद की ज़िंदगी है। वे अपने अतीत के साथ जी रहे हैं ।

और यहाँ उन्हें एक-दूसरे को झेलना पड़ता है । वे एक-दूसरे को मनाने की कोशिश करते हैं। और जैसा कि उनमें से दो काफ़ी अच्छा कर रहे होते हैं, तो या तो तीसरा उन्हें तोड़ देता है, या फिर उनमें से कोई एक ऐसा कुछ कर देता है जिससे कोई भी संभावित रिश्ता खत्म हो जाता है।

और आपको इसकी एक ड्रामैटिक तस्वीर मिलती है, जो इंसान अपने लिए इस दूसरे को चाहता है, उसे दूसरा नकार रहा है, जो कि अपने आप में यही है । क्या आप समझ रहे हैं? जब तक, नाटक के आखिर में, आपको यह लाइन नहीं मिलती, नरक दूसरे लोग हैं। ठीक है, चलिए शुरू करते हैं।

नाटक का अंत। बिना सिंथेसिस के एंटीथीसिस । L'Ansoir का एंटीथीसिस L'Apursoir बिना सिंथेसिस के।

और यह मार्सेल से बिल्कुल अलग है, जिसका एक नाटक है जिसमें एक और थ्रीसम है, जिसका नाम है द मैन ऑफ़ गॉड। फ्रांस में एक प्रोटेस्टेंट पादरी जिसका अपनी पत्नी के साथ रिश्ता कुछ ठीक नहीं है, और जिसकी बेटी घर से भागने वाली है। समझे ? और जैसे ही संकट टूटने वाला था, दरवाज़े पर दस्तक हुई और एक पैरिश की सदस्य अपने बच्चे के साथ अंदर आ गई, जो पादरी की मदद के लिए बेताब थी।

तो वह पैरिशियन की देखभाल करता है । और फिर जब वह दूसरों के पास वापस आता है, तो वह कहता है, वे सब कहते हैं, ठीक है , अब हमें ऐसे लोगों के लिए जीना है । मैंने अभी कहा कि मार्सेल संत को नकार रहा है।

मुझे लगता है कि मैन ऑफ़ गॉड, नो एग्जिट को जानबूझकर नकारता है। जहाँ, ल'अपुर्सोइर के अपने लिए चाहने के बजाय, खुद को देने की सोच है, जो एक अच्छे रिश्ते का आधार है। तो यह इन दोनों ग्रुप्स के बीच एक दिलचस्प अंतर है।

ठीक है। चलिए कीर्केगार्ड के बारे में कुछ बातें बताते हैं। ओह, वैसे, धार्मिक लोगों में से एक रशियन ऑर्थोडॉक्स, निकोलस बाजाएव हैं।

तो आपको वहां कई तरह की यहूदी-ईसाई परंपराएं मिलती हैं। ठीक है। कीर्केगार्ड, 19वीं सदी के बीच के डेनिश विचारक थे, उन्होंने हेगेल के समय में जर्मनी में पढ़ाई की थी।

और मुझे लगता है कि यह कहना सही होगा कि कीर्केगार्ड का सेंट्रल थीम, जो एक तरह से बाद के एग्जिस्टेंशियलिज़्म के लिए रफ़्तार तय करता है, एक इंसान बनने का थीम है। जो कीर्केगार्ड के लिए, एक क्रिश्चियन बनना है। लेकिन यह, ज़ाहिर है, सवाल है: इस तरह की दुनिया में एक इंसान होना क्या है? और आप पाते हैं कि कीर्केगार्ड एक इंसान के एनलाइटनमेंट अकाउंट और चीज़ों के रोमांटिकिस्ट अकाउंट, दोनों की कमियों की आलोचना करते हैं।

ज्ञानोदय और स्वच्छंदतावाद दोनों ही काफी नहीं हैं । हम समझदार जानवर नहीं हैं; हम मुख्य रूप से बाहरी चीज़ों से जुड़े नहीं हैं। हम क्रिएटिव स्पिरिट से भरे नहीं हैं, यह बहुत बढ़िया है।

नहीं, वे तस्वीरें बेकार, झूठी उम्मीदें हैं। बल्कि, वह ईसाई बनने के दो रास्तों के बारे में बात करते हैं। और यह उनके काम 'ए कन्क्लूडिंग अनसाइंटिफिक पोस्टस्क्रिप्ट' में सबसे सिस्टमैटिक तरीके से बताया गया है।

उस टाइटल में उनकी मशहूर आयरनी का थोड़ा सा हिस्सा है। यह लगभग 400 पेज का है, मुश्किल से कोई पोस्टस्क्रिप्ट है। कम से कम कहें तो यह अनसाइंटिफिक है।

आप जानते हैं, एग्ज़िस्टेंशियलिस्ट 18वीं सदी, 19वीं सदी के साइंस से क्या सीखेंगे। इससे क्या पता चलेगा ? वगैरह। लेकिन क्रिश्चियन बनने के जिन दो रास्तों के बारे में वह बात करते हैं, वे हैं ऑब्जेक्टिव और सब्जेक्टिव रास्ते।

आप समझे? अब ऑब्जेक्टिव रास्ता नेचुरल थियोलॉजी का रास्ता है। या हिस्टोरिकल सबूतों का रास्ता। और इस बारे में उनकी शिकायत यह है कि यह अलग-अलग है।

एक है तर्क करने वाले का फैसला न कर पाना। क्योंकि आप जानते हैं कि तर्क और सबूत के साथ ऐसा ही होता है। जवाबी तर्क भी होते हैं ।

तो आपको हमेशा काउंटर-आर्गुमेंट का जवाब देना होगा । और फिर काउंटर-आर्गुमेंट के लिए एक तर्क होता है , और आपको उस काउंटर-आर्गुमेंट का जवाब काउंटर-आर्गुमेंट के लिए देना होता है । और फिर एक काउंटर-आर्गुमेंट होता है , आप काउंटर-आर्गुमेंट के काउंटर पर होते हैं ।

और इसी तरह आगे भी। और हमेशा कुछ और होता है जो करना होता है । यह मुझे मेरे एक दोस्त की याद दिलाता है, जो 50 के दशक में एक खास टॉपिक पर एक छोटी सी किताब लिखने वाला था।

और वह कहते रहे, ठीक है, कुछ और आने वाला है, एक जर्नल में एक और आर्टिकल जिसे मैंने नहीं देखा है। और इसलिए उन्होंने इसे तब तक के लिए टाल दिया। अब 92 हो गए हैं।

वह रिटायर हो चुके हैं, और किताब कभी लिखी ही नहीं गई, आप समझ रहे हैं। हाँ। खैर, कीर्केगार्ड यह बात समझते हैं, आप समझ रहे हैं।

यह जर्मनिक स्कॉलर, 19वीं सदी की जर्मन स्कॉलरशिप की आदत है। आपको पता है, आपको द एलीफेंट का तीन वॉल्यूम वाला जर्मन इंट्रोडक्शन याद है, याद है? तो, वह ऑब्जेक्टिव रास्ता असल में कहीं नहीं ले जाता । यह कभी खत्म नहीं होता।

और कीर्केगार्ड कहते हैं, ऐसा इसलिए है क्योंकि, एक, इसमें कोई पक्का शुरुआती पॉइंट नहीं है, डेसकार्टेस का सीधा रेफरेंस नहीं है, आप देखिए। और, क्योंकि इसका लॉजिक यूनिवर्सल कॉन्सेप्ट से डील कर सकता है , लेकिन इंडिविजुअल अस्तित्व से नहीं। याद रखें कि डिडक्टिव लॉजिक को अगर किसी सिलोगिज़्म में कोई लॉजिकल कनेक्शन होना है, तो उसमें कम से कम एक बार एक टर्म यूनिवर्सली डिस्ट्रिब्यूटेड होना चाहिए।

तो, पारंपरिक लॉजिक किसी व्यक्ति, खास व्यक्ति, खास हालात का लॉजिक नहीं है । लेकिन इसके अलावा, ऑब्जेक्टिव रास्ता हमें पैशन से दूर कर देता है । ओह, हाँ, शांत, समझदार तर्क, आप जानते हैं, हमें उस पैशन से दूर कर देता है जो अकेले विश्वास, प्यार और उम्मीद को बढ़ावा देता है।

तो, उदाहरण के लिए, आपको 297 पर एक हिस्सा मिलेगा जिसमें कीर्केगार्ड यह बात कहते हैं कि एक लॉजिकल सिस्टम मुमकिन है। हाँ, बहुत सारे लॉजिकल सिस्टम मुमकिन हैं। उनमें से बहुत सारे, स्पिनोज़ा, लाइबनिज़, हेगेल, डेसकार्टेस।

एक लॉजिकल सिस्टम मुमकिन है, लेकिन एक एग्ज़िस्टेंशियल सिस्टम नामुमकिन है, आप देखिए, क्योंकि इसके यूनिवर्सल सच किसी एक के होने की उस फिसलन भरी मछली को नहीं पकड़ सकते। अब, दूसरी तरफ, सब्जेक्टिव रास्ता एक अलग मामला है क्योंकि सब्जेक्टिव रास्ता, अंदर की ओर जाना, जोश से जवाब देता है और क्राइस्ट में भगवान के हमारे सामने आने पर जोश से जवाब देता है। कहने का मतलब है कि जबकि ऑब्जेक्टिव रास्ता कहेगा, ठीक है, मैं भगवान के होने को साबित नहीं कर सकता, या मैं अवतार को साबित नहीं कर सकता, या ऑब्जेक्टिव रास्ता कहेगा, ठीक है, समय में हमेशा रहने वाले होने के बारे में यहाँ कुछ उलटी बात लगती है।

ऐसा कैसे हो सकता है? आप देखेंगे। सब्जेक्टिव रास्ता बस विश्वास के जुनून और शुक्रगुजार प्यार के साथ जवाब देता है। आप देखेंगे।

और यही ईसाई बनना है। अब, इन शब्दों पर ध्यान दें। कुछ जगहें हैं जहाँ वह सत्य को सब्जेक्टिव बताते हैं।

अब, इससे सावधान रहें। उनका मतलब यह नहीं है कि यह सिर्फ़ आपके दिमाग में है और कहीं नहीं, कि पॉप सब्जेक्टिव का इस्तेमाल करते हैं। उनका मतलब यह नहीं है कि यह रिलेटिव है।

क्योंकि वह भगवान या सच्चाई के साथ किसी के रिश्ते को बताने के लिए ऑब्जेक्टिव और सब्जेक्टिव शब्दों का इस्तेमाल करते हैं । आप देखेंगे। या और खास तौर पर, वह सच्चाई के साथ आपके रैशनल रिश्ते को बताने के लिए ऑब्जेक्टिव का इस्तेमाल करते हैं, अलग-थलग, यह मापने के लिए कि आपको अभी और कितना जाना है, वगैरह।

और वह "सब्जेक्टिव" शब्द का इस्तेमाल रिश्ते के बारे में बात करने के लिए करते हैं, सच्चाई से नहीं, बल्कि खुद भगवान से। यहाँ पर्सनल रिश्ते पर फोकस करें, जबकि यहाँ नेचुरल थियोलॉजी के लॉजिक पर। आपको फर्क दिख रहा है? अच्छा, आप में से कितने लोगों के साथ गार्डनर है? बॉय स्काउट मोटो, तैयार रहें।

ठीक है, आपको मुझसे पढ़वाना होगा । इसलिए मैंने आपको पेज 302 से पढ़कर सुनाया। और आप इसे और अच्छे से समझने के लिए खुद भी दोबारा पढ़ सकते हैं।

302. जब सच का सवाल ऑब्जेक्टिव तरीके से उठाया जाता है, तो सोच ऑब्जेक्टिव तरीके से सच पर केंद्रित होती है , एक ऐसी चीज़ के तौर पर जिससे जानने वाला जुड़ा होता है। यह इस सवाल पर फोकस होता है कि क्या यह सच है।

अगर सिर्फ़ वही चीज़ सच है जिससे उसका रिश्ता है, तो उस सब्जेक्ट को सच में माना जाता है। लेकिन जब सच का सवाल सब्जेक्टिवली उठाया जाता है, तो सोच सब्जेक्टिवली होती है , यानी, अपने पूरे मन से, उस इंसान के रिश्ते के नेचर पर। और अगर सिर्फ़ इस रिश्ते का तरीका सच में है , तो इंसान सच में है, भले ही वह उससे जुड़ा हो जो सच नहीं है।

दूसरे शब्दों में, हो सकता है कि आप कुछ चीज़ों को गलत समझें और गलत हों। लेकिन एक सब्जेक्टिव रिश्ता फिर भी हो सकता है। इसलिए वह ऑब्जेक्टिव और सब्जेक्टिव रास्तों के बारे में बात करते हैं।

और यह बताता है कि ऑब्जेक्टिव इस बात पर ज़ोर देता है कि क्या कहा गया है। सब्जेक्टिव इस बात पर ज़ोर देता है कि कैसे कहा गया है। अब ऐसे दो तरीके सोचें जिनसे आप अपॉस्टल्स क्रीड को पढ़ सकते हैं।

मैं सर्वशक्तिमान ईश्वर पिता, स्वर्ग और पृथ्वी के बनाने वाले, और उनके इकलौते बेटे, हमारे प्रभु यीशु मसीह, जो वर्जिन मैरी से पैदा हुए थे, वगैरह में विश्वास करता हूँ। अब ऑब्जेक्टिव कहता है, मुझे विश्वास है कि ये सभी बातें सच हैं। सब्जेक्टिव कहता है, प्रभु, मुझे विश्वास है।

मैं पूरे दिल से यह मानता हूँ। तो उन्होंने सच की यह परिभाषा इस सब्जेक्टिव तरीके से एक ऑब्जेक्टिव अनिश्चितता के तौर पर सोची है। हाँ, आपने इसे पूरी तरह से पक्के तौर पर लॉजिकली साबित नहीं किया है।

यह फाउंडेशनलिज़्म के खिलाफ है। एक ऑब्जेक्टिव अनिश्चितता जो सबसे ज़्यादा जोशीले अंदरूनीपन के एप्रोप्रिएशन प्रोसेस में मज़बूती से बनी रहती है। अब यह किसी भी मौजूदा इंसान के लिए सबसे बड़ा सच है जिसे पाया जा सकता है।

ऐसा लगता है जैसे उनका टेक्स्ट गॉस्पेल में उस आदमी जैसा है जिसने कहा था, हे प्रभु, मुझे विश्वास है, मेरे अविश्वास में मदद करो। यानी, मेरा लॉजिकल पक्का यकीन न होना , यह एक बात है। लेकिन पूरे जोश के साथ, मुझे विश्वास है।

अब, कीर्केगार्ड जो ज़्यादातर दूसरी चीज़ें करते हैं, वे इसी पर सोच-विचार करते हैं। यह पैशनेट रिश्ता क्या है? हम इसे फेनोमेनोलॉजिकली कैसे बताएंगे? और अगली बार हमें इसी पर गौर करना होगा। इसमें विश्वास, प्यार, उदासी, डर, मौत के नीचे बीमारी, वगैरह, वगैरह जैसे कॉन्सेप्ट शामिल हैं।

तो हम इसे बुधवार को वहां से ले लेंगे।